जीवन में यम और नियम

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीवन को व्यवस्थित और सुचारू रूप से संचालित करने के लिए अनेक प्रक्रम करने पड़ते हैं। खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार और पर्यावरण का हमारे जीवन में बहुत असर पड़ता है। यदि पर्यावरण प्रदूषित रहे तो हम कितना भी सैद्धान्तिक जीवन जियें हमें कोई लाभ नहीं हो सकता। जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए यम और नियम की महत्ती आवश्यकता है।अष्टांग योग आठ अंगों वाला योग, को आठ अलग–अलग चरणों वाला मार्ग नहीं समझना चाहिए, यह आठ आयामों वाला मार्ग है, जिसमें आठों आयामों का अभ्यास एक साथ किया जाता है। योग के ये आठ अंग हैं– **यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।** अष्टांग योग महर्षि पतंजलि के अनुसार चित्तवृत्ति के निरोध का नाम योग है। इसकी स्थिति और सिद्धि के निमित्त कतिपय उपाय आवश्यक होते हैं, जिन्हें अंग कहते हैं और जो संख्या में आठ माने जाते हैं। अष्टांग योग के अंतर्गत प्रथम पांच अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार बहिरंग और शेष तीन अंग धारणा, ध्यान, समाधि अंतरंग नाम से प्रसिद्ध हैं। बहिरंग साधना यथार्थ रूप से अनुष्ठित होने पर ही साधक को अंतरंग साधना का अधिकार प्राप्त होता है। यम और नियम वस्तुतः शील और तपस्या के द्योतक हैं। यम का अर्थ है संयम जो पांच प्रकार का माना जाता है– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इसी भांति नियम के भी पांच प्रकार होते हैं– शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान, ईश्वर में भक्तिपूर्वक सब कर्मों का समर्पण करना। यम प्रथम सोपान है। इसका अर्थ है–संयम या नियंत्रण। योग सूत्र के अनुसार– **अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः।** अर्थात् अहिंसा सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का आचरण यम है। इस प्रकार के नैतिक आचरण से व्यक्ति और समाज का कल्याण होता है। सामाजिक जीवन में सुख–शांति रहती है। इसके विपरीत हिंसा, झूठ, चोरी, दुराचार और परिग्रह की वृत्ति, ईर्ष्या, द्वेष, लोभ, मोह आदि दुर्भावनाओं से उद्भूत होती है। अहिंसा जीवहिंसा का निषेध है। अहिंसा में यह भावना प्रबल होती है कि मैं किसी भी काल में, किसी भी रूप में

किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करूंगा— इस प्रकार भावना के दृढ़ होने पर साधक को हिंसक प्राणियों की हिंसावृत्ति को शान्त करने की सामर्थ्य प्राप्त होती है। अर्थात् जब दो परस्पर विरोध वाले हिंसक प्राणी यथा—सांप और नेवला भी अहिंसा प्रतिष्ठ साधक के समीप आते हैं तब वे अपना हिंसक स्वभाव छोड़कर शान्त हो जाते हैं। सत्य विषयक संयम की परिपूर्णता होने पर वाणी यथार्थता को धारण करती है। अर्थात् यदि सत्य संयम प्रतिष्ठित साधक किसी पापी को भी यह कह देता है कि तुम साधु बन जाओ तो वह साधु बन जाता है अर्थात् कालान्तर में साधु बन ही जाता है। साधु स्वभाव है न कि वेशभूषा। अस्तेय का अर्थ है चोरी न करना। अस्तेय की सिद्धि होने पर साधक के समक्ष रत्नों की उपस्थिति होने लगती है। ऐसे साधक के समझ सम्पत्तियां धूल के समान निर्मूल हो जाती है। ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा होने पर साधक को असीम शक्ति प्राप्त होती है। इन्द्रियों पर नियंत्रण हो जाता है। बाह्य विषयों की तरफ इन्द्रियां मन को आकर्षित नहीं करतीं। अपरिग्रह की प्रतिष्ठा होने पर साधक को अपने अतीत और अनागत जन्मों का बोध होता है अर्थात् साधक वर्तमान देह के समान अतीत और भावी देह धारण का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। अपरिग्रही साधक अनासक्त भाव से जीवन व्यतीत करता है। यमों का पालन करने से आत्मा निर्मल होती है। जहां यम व्यक्ति के सामाजिक आचरण की शुद्धता को लक्ष्य करता है वहां नियम उसके व्यक्तिगत आचरण की शुद्धता को लक्ष्य करता है। महर्षि पातंजलि ने पांच नियम बताएं हैं— शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधाम। शौच का अर्थ है पवित्रता। इसके बाह्य और आन्तरिक दो भेद हैं। बाह्य शौच के संयम से अपने और दूसरे के शरीर के प्रति आसक्ति कम होती है अर्थात् अपने और दूसरे के शरीर के प्रति राग और ममत्व छूट जाता है। शरीर, वस्त्र और आवास आदि के मल को दूर करना बाह्य शुद्धि है। वर्णाश्रम और योग्यतानुसार प्रमाणपूर्वक अन्न, धन आदि पवित्र वस्तुओं को प्राप्त कर शुद्ध भोजनादि करना तथा सबके साथ यथायोग्य पवित्र व्यवहार करना भी बाह्य शुद्धि ही है। आभ्यान्तर शौच अर्थात् राग—द्वेष आदि भावों पर संयम करने से चित्त की शुद्धि, मन की स्वच्छता, एकाग्रता, इन्द्रिय, संयम और आत्मदर्शन की योग्यता प्राप्त होती है। जप, तप और शुद्ध विचारों द्वारा तथा मैत्री आदि की भावना से अन्तः करण के राग—द्वेषादि मलों का नष्ट करना आभ्यान्तर शौच है। संतोष की दृढ़ता से चित्त में

अनुत्तम और ऊंचा से भी ऊंचा सुख प्राप्त होता है। संतोष में तृष्णा का सर्वथा क्षय किया जाता है। तपस्या से शारीरिक और इन्द्रिय अशुद्धि का क्षय होता है। अशुद्धि क्षय से शारीरिक बल और इन्द्रियों की सामर्थ्य बढ़ती है। स्वाध्याय में निरन्तर निष्ठा के दृढ़ होने पर इष्ट देवताओं के दर्शन करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है। इष्टमंत्र के जप रूप स्वाध्याय के सिद्ध होने पर योगी को इष्टदेवता का योग होता है अर्थात् वह देवता प्रत्यक्ष होता है। यम नियम का अभ्यास करने से आत्मा शुद्ध होती है। आत्मशुद्धि से आचार–विचार भी शुद्ध होते हैं।